(पृष्ठ २१ का शेष...)

अहा ! जो अयोगी गुणस्थान में होते हैं, उनकी देह छूटने पर वे यहाँ ही सिद्ध होते हैं और फिर यहीं से छह अपक्रम से रहित गति करके ऊपर जाते हैं।

सिद्ध भगवान तीनलोक के शिखर के समान हैं। उन्होंने समस्त क्लेश के घररूप अर्थात् द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भाव परावर्तनरूप पंचविध संसार को दूर किया है। ऐसे अयोगी भगवान को स्वभावगति क्रियारूप से परिणमित होने में स्वभावगति क्रिया का हेतु धर्मद्रव्य है और छह अपक्रम से युक्त ऐसे संसारियों को वह (धर्म) विभावगति क्रिया का हेतु है।

देखो, अयोगी भगवान छह अपक्रम से मुक्त हैं; जबकि संसारी जीव उन छह अपक्रम से युक्त हैं। धर्मास्तिकाय छह अपक्रम से युक्त संसारियों की विभावगति क्रिया का भी हेतु है। संसारी चार दिशाओं में या ऊपर नीचे जाते हैं - ऐसी उनकी विभावगति क्रिया है, उसका हेतु धर्मास्तिकाय है। आचार्यश्री इसका दृष्टान्त देते हैं -

'जिसप्रकार पानी मछलियों को गमन का कारण है; उसीप्रकार धर्मद्रव्य उन जीव-पुद्गलों को गमन का कारण है।'

वह धर्मद्रव्य अमूर्त है तथा आठ स्पर्श, पाँच वर्ण, पाँच रस और दो गंध रहित, अगुरुलघुत्वादि गुणों के आधारभूत, लोकमात्र आकारवाला/लोकप्रमाण आकारवाला अखण्ड एक पदार्थ है।

अहा ! धर्मास्तिकाय चौदह ब्रह्माण्ड में व्याप्त और स्पर्शादिरहित अखण्ड एक अरूपी पदार्थ है।

सहभावी गुण और क्रमवर्ती पर्यायें ऐसा शास्त्र का वचन होने से गति के हेतुभूत इस धर्मद्रव्य को शुद्धगुण और शुद्धपर्यायें होती हैं। साथ रहनेवाले गुण हैं और क्रम से होनेवाली पर्यायें हैं - यह शास्त्र का वचन है। अत: धर्मास्तिकाय में भी अनन्त शुद्धगुण और उनकी अनन्त शुद्धपर्यायें होती हैं।

अधर्मद्रव्य का विशेषगुण स्थितिहेतुत्व है, इस अधर्मद्रव्य के गुण पर्यायें उस धर्मास्तिकाय के सर्व गुण-पर्यायों जैसी होती हैं। देखो, गमन करनेवाले जीव पुद्गलों को स्थिर होने में अधर्मास्तिकाय निमित्त है - ऐसा स्थितिहेतुत्व उसका विशेषगुण है।

आकाश का अवकाशदानरूप लक्षण ही विशेषगुण है। इसके अन्य गुण धर्म द्रव्य और अधर्मद्रव्य के शेष गुणों जैसे ही हैं। इसप्रकार इस गाथा का अर्थ है।●

वीतराग-विज्ञान

वीतराग-विज्ञान ही, तीन लोक में सार।
वीतराग-विज्ञान का , घर-घर होय प्रसार।।

वर्ष : 27 307 अंक : 7

चेतन निज भ्रम तैं...

चेतन निज भ्रम तैं भ्रमत रहै।। टेक।।
आप अभंग तथापि अंग के संग महा दु:ख पुंज बहै।
लोहपिंड संगति पावक ज्यों दुर्धर घन की चोट सहै।।
चेतन निज भ्रम तैं भ्रमत रहै।।1।।
नामकर्म के उदय प्राप्त नर नरकादिक परजाय धरै।
तामें मान अपनपो विरथा जन्म-जरा-मृत पाय डरै।।
चेतन निज भ्रम तैं भ्रमत रहै।।2।।
कर्त्ता होय राग-रुष ठानै पर को साक्षी न रहत यहै।
व्यापक-व्याप्य भाव बिन किमिकर, पर को करता होत यहै।।
चेतन निज भ्रम तैं भ्रमत रहै।।3।।
जब भ्रमनींद त्याग निज में निज निज हित हेत सम्हारत है।
वीतराग-सर्वज्ञ होत तब भागचन्द हित सीख कहै।।
चेतन निज भ्रम तैं भ्रमत रहै।।4।।

– कविवर पण्डित भागचंदजी

नियमसार प्रवचन

यतियों की दशा

परमपूज्य सर्वश्रेष्ठ दिगम्बराचार्य कुन्दकुन्द के प्रसिद्ध परमागम नियमसार की 29 वीं गाथा की टीका में समागत 45 वें कलश पर हुये आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजीस्वामी के अध्यात्मरस गर्भित प्रवचनों का संक्षिप्त सार यहाँ दिया जा रहा है। कलश मूलत: इसप्रकार है –

अचेतने पुद्गलकायकेऽस्मिन् सचेतने वा परमात्मतत्त्वे।
न रोषभावो न च रागभावो भवेदियं शुद्धदशा यतीनाम् ।।45 ।।

इस अचेतन पुद्गलकाय में द्वेषभाव नहीं होता और सचेतन परमात्मतत्त्व में रागभाव नहीं होता – ऐसी शुद्धदशा यतियों की होती है।

(गतांक से आगे...)

यति को प्रथम भूमिका में ऐसा राग होता है कि ये परमेश्वर हैं, परमात्मा हैं; तथापि वे उसे आदरणीय नहीं मानते। अहा ! आत्मध्यानी मुनियों की/यतियों की ऐसी शुद्धदशा के कारण उनको समभाव होता है। सारी दुनिया में खलबलाहट हो जाने पर भी उनको विषमभाव उत्पन्न नहीं होता।

कितनी भी अनुकूलता हो, चाहे इन्द्र स्तुति करे तो भी उसमें राग नहीं अथवा कितनी भी प्रतिकूलता हो चाहे निन्दा की झड़ी बरसे, तो भी उसमें द्वेष नहीं है; क्योंकि वह तो पुद्गल है। अहा! ऐसे यति रागरहित निजस्वभाव में समस्थितिपने को प्राप्त होते हैं, उनकी दशा अलौकिक वर्तती है। भले ही निचली भूमिका अर्थात् चौथे, पाँचवें, छठवें गुणस्थान में राग होता है, तथापि दृष्टि में उसका आदर तो वहाँ भी नहीं होता; परन्तु अब यति की भूमिका में तो राग है ही नहीं। यहाँ तो जिनको अस्थिरता ही मिट गयी है, उनकी बात है।

निचले गुणस्थानों में परमात्मा के प्रति विकल्प और कुछ अंशों में द्वेषरूप अस्थिरता होती है; परन्तु इस अस्थिरता का अंश जहाँ छूट गया है, वहाँ से आगे तो समभाव....समभाव.....समभाव ही वर्तता है अर्थात् वे तो वीतरागी बिम्ब होकर ज्ञातामात्र रहते हैं। इसकारण उनको निन्दा की झड़ी में द्वेष व साक्षात् परमात्मा विराजमान होने पर भी उनको सुनने के विकल्परूप राग नहीं है।

अहा ! आत्मा का स्वरूप ही समभावी है; अत: जिनको ऐसे आत्मा की समस्थिति प्रगट हुई है अथवा समभाव प्रगट हुआ है - ऐसे संत पुद्गल या परमात्मा दोनों में ज्ञाता-दृष्टा होकर रहते हैं। अहा ! यतियों की ऐसी शुद्धदशा होती है।

अहाहा....! बापू ! साधु की दशा किसको कहते हैं ? इसका भी जगत को पता नही है। भाई ! सम्यग्दर्शन होने पर परमात्मा के प्रति राग और अचेतन के प्रति द्वेष करने योग्य कार्य नहीं है - ऐसी श्रद्धा तो हो जाती है; तथापि अस्थिरता रहती है; परन्तु समभावी संतों के तो वह अस्थिरता भी नहीं होती।

इसप्रकार यह पुद्गल की व्याख्या की। अब धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय और आकाश की व्याख्या करते हैं; क्योंकि यह पाँच अजीव द्रव्यों की व्याख्या है।

आगामी गाथा इसप्रकार है -

गमणणिमित्तं धम्ममधम्मं ठिदि जीवपोग्गलाणं च।
अवगहणं आयासं जीवादीसव्वदव्वाणं ।।30।।

धर्मद्रव्य जीव-पुद्गलों को गमन का निमित्त है और अधर्मद्रव्य उन्हें स्थिति का निमित्त है, आकाशद्रव्य जीवादि सर्वद्रव्यों को अवगाहन में निमित्त है।

देखो धर्म, अधर्म और आकाश - ये जगत के तीन पदार्थ हैं, तीन द्रव्य हैं और इस गाथा में उनका संक्षिप्त में कथन है। उनमें पहले धर्मास्तिकाय का वर्णन करते हैं।

यह धर्मास्तिकाय बावड़ी के पानी की भाँति स्वयं गतिक्रिया रहित है।

देखो, यहाँ बावड़ी के पानी का दृष्टान्त है; क्योंकि नदी का पानी तो हिलता है, गति करता है, लेकिन बावड़ी का पानी हिलता नहीं है; अपितु स्थिर रहता है। इसीप्रकार धर्मास्तिकाय भी एक अरूपी पदार्थ है और उसमें गति नहीं है, वह स्थिर है।

मात्र (अ, इ, उ, ऋ, लृ) पाँच ह्रस्व अक्षरों के उच्चारण जितनी जिनकी स्थिति है - ऐसे अयोगी (चौदहवें) गुणस्थान के अन्त में सिद्धशिला में जाने की गति क्रिया में भी धर्मास्तिकाय ही निमित्त है - ऐसा सिद्ध करते हैं।

सिद्ध परमात्मा छह अपक्रम से विमुक्त हैं। छह अपक्रम अर्थात् छह दिशाओं में जाना। संसारी जीव देह छूटने पर छहों दिशाओं में (चार दिशायें और ऊपर-नीचे इन छहों दिशाओं में) जाते हैं; परन्तु जब चौदहवें गुणस्थानवाले जीव यहाँ से मोक्ष में जाते हैं, तब उनकी गति इन छह दिशाओं में नहीं होती; अपितु उनका ऊर्ध्वगमन ही होता है।

(शेष पृष्ठ 4 पर ...)

छहढाला प्रवचन

जीव अजीव के बारे में विशेष भूल

मैं सुखी–दुःखी मैं रंक–राव, मेरे धन–गृह गोधनप्रभाव।
मेरे सुत तिय मैं सबल दीन, बेरूप–सुभग मूरख–प्रवीन।।४।।

(सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक विद्वान दौलतरामजीकृत छहढाला पर गुरुदेवश्री के प्रवचन पाठकों के लाभार्थ यहाँ प्रस्तुत किये जा रहे हैं।)

(गतांक से आगे....)

शरीर हृष्ट–पुष्ट हो, इच्छानुसार खान–पानादि होता हो, वहाँ जीव मान लेता है कि मैं बलवान हूँ; परन्तु अरे मूर्ख ! तू देह का अभिमान क्यों करता है? तेरी आत्मा में मिथ्यात्व का बड़ा रोग हुआ है। अमूर्त आत्मा मूर्तिक आहार को कैसे खावे? आत्मा तो देह और आकार दोनों से भिन्न है। अठारह साल का एक युवक अपने दोनों हाथ से दो आदमियों को ऊपर उठाता था, वही जब मरण–सन्मुख हुआ, तब कुछ बोलने की भी शक्ति न रही और दूसरे दो आदमियों ने उसको उठाया।

भाई ! देह का बल आत्मा का कहाँ है? और देह निर्बल होने पर आत्मा कहाँ निर्बल हो जाता है ? हिन्दुस्तान का एक बड़ा पहलवान, जो दौड़ती मोटर गाड़ी को पकड़कर रोक देता था और अपनी छाती पर हाथी को चलाता था; तथापि मृत्यु के समय अपनी आँख पर बैठी मक्खी उड़ाने की ताकत भी नहीं रही। कहाँ गया उसका बल? वह बल आत्मा का था ही नहीं; आत्मा तो उस समय भी अन्दर विद्यमान था और बहुत इच्छा भी की थी; परन्तु शरीर में उसका क्या चले? भाई ! देह का बल तेरा है ही नहीं और देह की निर्बलता भी तेरी नहीं है; तू तो ज्ञान है, ज्ञान ही तेरा रूप है।

शरीर सुन्दर रूपवाला हो या कुरूप हो, उन दोनों से आत्मा भिन्न है। सचमुच में तो आत्मा का चेतनस्वरूप ही सुन्दर है; परन्तु अपने सुन्दर निजरूप को न देखकर अज्ञानी शरीर की सुन्दरता से अपनी शोभा मानता है और शरीर कुरूप होने पर अपने को हीन समझता है। भाई ! कुरूप शरीर केवलज्ञान लेने में कोई विघ्न नहीं करता और सुन्दररूपवाला शरीर केवलज्ञान लेने में कुछ मदद भी नहीं करता। यद्यपि तीर्थंकरादि उत्तम पुरुषों के तो देह भी लोकोत्तर होती है; किन्तु वह भी आत्मा से तो भिन्न ही है। देह आत्मा की वस्तु नहीं है। देह से भिन्न आत्मा को जो पहचाने, उसने ही भगवान को सच्चे रूप से पहचाना है। देह भगवान नहीं है, भगवान तो अन्दर में

चैतन्यमूर्ति केवलज्ञानादि गुणसहित विराजमान है। प्रत्येक आत्मा ऐसा चेतनरूप है; शरीर सुन्दर हो या कुरूप - वह जड़ का रूप है, आत्मा उस रूप कभी नहीं हुआ। जो जड़ है, वह तीनों काल जड़ ही रहता है और जो चेतन है, वह तीनों काल चेतन ही रहता है। जड़ और चेतन कभी भी एक नहीं होते; शरीर और आत्मा सदैव जुदे ही हैं। ऐसे आत्मा को अनुभव में लेने से सम्यग्दर्शन होकर अपूर्व शांति होती है। ऐसे आत्मा की धर्मदृष्टि के बिना मिथ्यात्व मिटता नहीं, दुःख टलता नहीं और शांति होती नहीं।

हे भाई ! तुम अपने मुँह पर सफेद धूलि (पाउडर) या रंग (लिपस्टिक) लगाकर शरीर को अच्छा दिखाना चाहते हो; परन्तु उस शरीर की शोभा से तुम्हारी शोभा नहीं है, तुम्हारी शोभा तो तुम्हारे निजी गुणों से है; सम्यग्दर्शनादि अपूर्व रत्नों से ही आत्मा शोभता है। शरीर तो जड़ अर्थात् चेतन से रहित मृत कलेवर है - क्या उसकी सजावट से आत्मा की शोभा है? नहीं; भाई ! सम्यक्त्वरूपी मुकुट से और चारित्ररूपी हार से तुम्हारे आत्मा को अलंकृत करो। सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप रत्नत्रय से आत्मा की शोभा है। चेतनभगवान की शोभा जड़ शरीर से नहीं होती; अतः देहदृष्टि छोड़कर आत्मा को पहचानो - ऐसा उपदेश है।

अज्ञानी देहादि संयोग में आत्म-संकल्प करता है, सो भूल है, यह बात की; अब यह समझाते हैं कि पर्याय में इंद्रिय-ज्ञानरूप अपनी अल्प ज्ञानपर्याय जितना ही अपने को मानना भी भूल है। पर्याय में ज्ञान की मन्दता देखकर पर्यायबुद्धिवाला जीव ऐसा समझ लेता है कि मैं मूर्ख हूँ, मुझे कुछ भी नहीं आता; परन्तु अरे भाई ! तुम तो केवलज्ञान लेने की ताकत से भरे हो। अल्प पर्याय जितने ही तुम नहीं हो; अनन्त केवलज्ञान निधान तुम्हारे में भरे हैं, उसकी श्रद्धा करो। पर्याय में ज्ञान अल्प होने पर आत्मा को उतना ही समझकर अपने को मूर्ख मान लिया और आत्मा के केवलज्ञान स्वभाव को भूल गया। हे जीव ! अरहन्तों को सर्वज्ञता कहाँ से आई? आत्मा में से आई तो तेरा आत्मा भी सर्वज्ञस्वभाववाला है, उसको लक्ष में ले तो तेरी पर्याय में मूर्खता नहीं रहेगी, तेरा ज्ञान विकसित होकर केवलज्ञान हो जायगा। अहा, चैतन्य की अपार ताकत ! उसमें मूर्खता कैसी !

उसीप्रकार पर्याय में थोडी बहुत बुद्धि देखकर अज्ञानी ऐसा समझ लेता है कि मैं बहुत प्रवीण हूँ, मुझे सब कुछ आता है; इसप्रकार पर्यायबुद्धि से अल्पज्ञान का अभिमान करता है; परन्तु हे जीव! अपने केवलज्ञानस्वभाव की महानता को तू भूल रहा है; अतः

थोड़े से ज्ञान में तेरे को बहुत अधिकता दिखती है। अरे ! केवलज्ञान के अपार सामर्थ्य के सामने तेरे तुच्छ ज्ञान की क्या गिनती है? अपने सर्वज्ञस्वभावी आत्मा को प्रतीत में लेते ही अल्पज्ञान का तेरा अभिमान उड़ जायगा और पर्यायबुद्धि छूट जायगी। बाहर की अनेक प्रकार की जानकारी में तेरी चतुराई आत्महित के लिये किसी काम की नहीं है; अत: अन्तर्मुख ज्ञान द्वारा आत्मा को जान ! वही सच्ची होशियारी है। आत्मा की जागृति जिसमें न हो वह तो बेहोशी है - उसे होशियारी कौन कहे? जिसप्रकार जिसने कभी समुद्र नहीं देखा - ऐसे कूप-मेंढक की तरह गंदे पानी के छोटे गड्ढे को महान समझता है; किन्तु अगाध स्वच्छ समुद्र के सामने गंदे पानी के गड्ढे की क्या गिनती? उसीप्रकार जिसने आनन्द से भरा स्वच्छ अगाध चैतन्यसमुद्र नहीं देखा, वह कुज्ञान के अल्पविकास के अभिमान में अटक जाता है; परन्तु सर्वज्ञस्वभाव से भरे हुए अगाध समुद्र के सामने उसके अल्पज्ञान का मूल्य छोटे गड्ढे जितना भी नहीं है।

इसप्रकार शरीर से लेकर कुज्ञान के अल्प उघाड़ तक के भाव में जिनको एकत्वबुद्धि है, उन सभी ने जीवतत्त्व को नहीं पहचाना; जीवतत्त्व का सच्चा स्वरूप समझने में उनको भूल है। ऐसी भूल के कारण जीव अनादि से चार गति में रुलता हुआ अनंत दुःख भोग रहा है। जिनका वर्णन सुनने से भी दिल कांपने लगे - ऐसे दुःखों का थोड़ा-सा कथन पहली ढाल में किया था। अरे भाई ! ऐसे दुःखों से छूटने के लिये वीतराग-विज्ञान द्वारा आत्मा का सच्चा स्वरूप समझो और अपनी मिथ्यात्वरूप भूल को दूर करो - ऐसी श्री गुरु की शिक्षा है।

आत्मा तो ज्ञानस्वरूप है; उसमें अतिरेक (अतिव्याप्ति) करके जो पर को भी उसमें मिलाता है अर्थात् शरीरादि अजीव को भी जीव मानता है, उसकी मान्यता विपरीत है - मिथ्या है। ज्ञान जिसकी चाल है, ज्ञान जिसका निजरूप है, ज्ञान जिसका भाव है, ज्ञान जिसकी संपदा है - ऐसे आत्मा में किसी भी परपदार्थ को अपना मानना आत्मा की अतिव्याप्ति रूप मिथ्याश्रद्धा है। ऐसा जीव परद्रव्य के भावों को अपने में मिलाना चाहता है। जहाँ ऐसा मिथ्यात्व हो, वहाँ किसी भी तरह का धर्म या सुख नहीं होता। आत्मा ज्ञानानन्द है, उसके वेदन के बिना धर्म कैसा? और सुख कैसा? शरीरादि की क्रियाओं से धर्म की मान्यता भूल से भरी हुई है; क्योंकि शरीरादि संयोग में आत्मा नहीं है, संयोग से आत्मा को दुःख-सुख नहीं है; अतः संयोग से भिन्न जीव को पहचानना चाहिए। इसप्रकार जीव-अजीव का यथार्थ स्वरूप जानकर भेदज्ञान करने से मिथ्यात्व मिट जाता है और जीव का अपूर्व हित प्रगट होता है।

अरे ! जैनपरम्परा में आकर के भी जीव ने यदि अजीव से भिन्न अपनी पहिचान न की तो उसको क्या लाभ? जीव-अजीव की भिन्नता को जाने बिना सच्चा जैनत्व नहीं होता; अतः दुःख नहीं मिटता और सुख नहीं होता। कोई जीव बाह्य में शुभराग से भले त्यागी-दिगम्बर साधु भी हो जाये; परन्तु अन्तर में यदि ऐसा मानता हो कि - 'ये देहादि की क्रियाएँ मेरी हैं, शुभराग मोक्ष का साधन है' तो वह मिथ्यादृष्टि ही है। जिनेन्द्र भगवान उसको जैन ही नहीं कहते; साधुपने की तो बात ही क्या? अरे भाई ! देह की क्रिया तो जड़ की क्रिया है, उसका कर्त्ता तुम कैसे हो गये? यदि तुम जड़ के कर्त्ता बनोगे तो तुम भी जड़ हो जाओगे; क्योंकि जड़ ही जड़ का कर्त्ता होता है। रागादि को तो किसी अपेक्षा से आत्मा की क्रिया कह भी सकते हैं; क्योंकि वह आत्मा की पर्याय में है; परन्तु भाषा वगैरह तो व्यवहार से भी आत्मा की पर्याय नहीं है, वह तो जड़ की पर्याय है, आत्मा उसका कर्त्ता नहीं है। जो अपने को जड़ पर्याय का कर्त्ता मानता है, उसको जड़ से भिन्न आत्मा का ज्ञान नहीं है।

जैसे परद्रव्य आत्मा के नहीं है और परद्रव्य के काम आत्मा नहीं करता; वैसे परद्रव्य भी आत्मा का भला-बुरा नहीं करते; क्योंकि पदार्थ स्वयं इष्ट-अनिष्ट नहीं हैं। यदि पदार्थ ही इष्ट या अनिष्ट हो तो जो पदार्थ इष्टरूप हो, वह सभी को इष्टरूप ही होना चाहिए और जो पदार्थ अनिष्ट रूप हो वह सभी को अनिष्टरूप ही लगना चाहिए; परन्तु ऐसा तो नहीं होता। जीव स्वयं ही कल्पना करके किसी पदार्थ को इष्ट और किसी को अनिष्ट मानता है; यह उसकी असत्य कल्पना है।

जिनको उपयोगस्वरूप जीव वस्तु का अनुभव नहीं है, वे अनेक प्रकार से कहीं-न-कहीं मिथ्या अभिप्राय करते हैं। कहीं बाह्य संयोग में, कहीं देह की क्रिया में, भाषा में या आगे चलकर राग में आत्मा का स्वरूप मानकर रुक जाते हैं। वे उन सभी से भिन्न शुद्ध उपयोगरूप अपने को नहीं जानते। शुद्ध जीव स्वभाव में राग का भी कार्य नहीं तो फिर जड़ का कार्य उसमें कहाँ से होगा? जो आत्मा का स्वरूप नहीं है, उसको आत्मा का स्वरूप मान लेना स्वतत्त्व की बड़ी भूल है। यह जीव स्वयं अपना स्वरूप भूलकर ही महा दुःखी होता है; अतः आचार्यदेव कहते हैं कि उस भूल को तुम छोड़ो और शुद्ध जीवतत्त्व का सच्चा स्वरूप पहचानकर सम्यग्दर्शन प्रगट करो।

इस छन्द में अज्ञानी की जीवतत्त्व संबंधी भूल दिखाई है; अब आगे अजीव एवं आस्रवादि तत्त्वों के सम्बन्ध में भी अज्ञानी कैसी भूल करते हैं - वह दिखायेंगे। ●

ज्ञान गोष्ठी

सायंकालीन तत्त्वचर्चा के समय विभिन्न मुमुक्षुओं द्वारा
पूज्य स्वामीजी से पूछे गये प्रश्न और स्वामीजी द्वारा दिये गये उत्तर

प्रश्न : भगवान की भक्ति से रूपया-पैसा आदि लौकिक सुख की सामग्री मिलती है या नहीं ?

उत्तर : जो रुपये-पैसे आदि की आशा से वीतराग भगवान की भक्ति करता है, वह व्यवहार से भी भगवान का भक्त नहीं है। यदि कोई लौकिक आशा से सच्चे देव-गुरु को मानता हो और कुदेवादि को नहीं मानता हो, तो भी वह पापी है। उसका गृहीत मिथ्यात्व भी छूटा हुआ नहीं कहा जा सकता। वीतरागी देव-गुरु तो धर्म को समझाने के लिये निमित्तमात्र हैं, उसकी जगह यदि कोई लौकिक आशा से उनको मानता हो, तो उसे पुण्य भी नहीं होगा; किन्तु पापबंध होगा, धर्म समझने की बात तो दूर ही रही।

प्रश्न : सच्चे देव-शास्त्र-गुरु को मानने से तो सम्यग्दर्शन हो जायेगा न ?

उत्तर : जब सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की पहिचान कर उनके लिये तन-मन-धन अर्पण करने की भावना आ जाये और जब उसे आत्मा की ऐसी श्रद्धा हो जाये कि देव-गुरु के प्रति होनेवाला राग भी पुण्यबंध का कारण है। वह आत्मा का स्वरूप नहीं है; तब अगृहीत मिथ्यात्व भी छूट जाता है। अनादि के अगृहीत मिथ्यात्व के छूटने पर ही जिनेन्द्र भगवान का सच्चा भक्त होता है, सच्चा जैनपना प्रगट होता है।

प्रश्न : आप कहते हैं कि शुभभाव से धर्म नहीं होता; इसलिये हमें देव-शास्त्र-गुरु की भक्ति का उत्साह नहीं आता ?

उत्तर : यह ठीक है कि शुभराग से धर्म नहीं होता, किन्तु यह कहाँ कहा है कि शुभराग को छोड़कर अशुभराग करो ? फिर तू स्त्री-पुत्र लक्ष्मी आदि के अशुभराग में रत क्यों रहता है ? इससे सिद्ध होता है कि तुझे निमित्त की परीक्षा करना नहीं आता। जिसे निमित्त की परीक्षा का भान नहीं है, वह अपने उपादान स्वरूप को कैसे पहिचानेगा ? भगवान अरहंतदेव, सत्शास्त्र और नग्न दिगम्बर भावलिंगी सद्गुरु अपने सत्स्वरूप को समझने में निमित्त हैं।

प्रश्न : आप तो व्यवहार को हेय कहते हैं, फिर अरहंतादि की भक्ति का उपदेश

क्यों देते हैं ?

उत्तर : जो यह तो जानता नहीं कि निश्चय क्या है एवं व्यवहार क्या है ? और व्यवहार शुद्धि के बिना मात्र निश्चयनय की ही बातें करता है, उसे निश्चयनय नहीं होता। जिसे सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के लिये तन-मन-धन अर्पण करने का भाव आता है, वह व्यवहार से अरहंतादि का भक्त है। प्रशस्त शुभराग होने पर गृहीत मिथ्यात्व छूटता है और अन्तर्स्वभाव के बल से शुभराग से अपने को भिन्न जानकर शुद्धस्वभाव की श्रद्धा करने पर निश्चयसम्यक्त्व होता है।

प्रश्न : भगवान की व्यवहारभक्ति और निश्चयभक्ति का क्या स्वरूप है ?

उत्तर : जिसे सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की पहिचान होती है तथा उनके लिये सर्वस्व समर्पण का भाव होता है, वह व्यवहार से भगवान का भक्त कहलाता है। भगवान का व्यवहार भक्त वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु को छोड़कर कुगुरु-कुदेव आदि का समर्थन नहीं करता। सत्यमार्ग एक ही होता है, तीन लोक एवं तीन काल में भी सत्यमार्ग दो नहीं होते।

वीतराग देव के अतिरिक्त अन्य देव को सच्चा माननेवाला वीतराग का भक्त नहीं है। सर्वज्ञदेव और कुदेवादि एक समान नहीं होते - ऐसी श्रद्धा होने पर सर्वज्ञ की व्यवहार श्रद्धा कहलाती है। कुछ लोग जैनधर्म व अन्य धर्मों का समन्वय करना चाहते हैं, किन्तु जैनधर्म व अन्यधर्मों का समन्वय कभी नहीं हो सकता। वीतराग के बाह्य या अंतरंग स्वरूप को अन्यथा माननेवाला भगवान का व्यवहार भक्त भी नहीं है।

जो सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की व्यवहारश्रद्धापूर्वक आनन्दघनस्वरूप निज आत्मा की श्रद्धा के बल से यह निर्णय करता है कि परपदार्थों के साथ मेरा कोई संबंध नहीं है, देव-शास्त्र-गुरु संबंधी शुभराग भी मेरा स्वरूप नहीं है, मैं अखण्ड ज्ञायक हूँ; वही भगवान का निश्चय भक्त है। जिसे निशचय भक्ति होती है, उसे व्यवहार भक्ति अवश्य होती है तथा उसे सच्चे देव-गुरु-धर्म के लिये उत्साहपूर्वक तन-मन-धन खर्च करने का भाव भी आये बिना नहीं रहता।

प्रश्न : भगवान तो वीतरागी हैं,वे धन का क्या करेंगे ?

उत्तर : भाई ! तुझे भगवान को कहाँ धन देना है ? भगवान के लिये कुछ नहीं करना है; किन्तु वीतरागता की रुचि बढ़ाकर देव-गुरु की प्रभावना के लिये खर्च करके तृष्णा कम करने के लिये कहा जाता है। यदि तुझे सत् की रुचि है, तो यह देख की अन्य साधर्मियों को किस बात की प्रतिकूलता है ? और यदि किसी को शास्त्र आदि की आवश्यकता है तो उसकी पूर्ति के लिये अपने पद के अनुसार हिस्सा दे।

समाचार दर्शन -

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय की साहित्यिक व सांस्कृतिक प्रतियोगिताऐं सम्पन्न

जयपुर (राज.) : यहाँ श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के अन्तर्गत प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु शास्त्री तृतीय वर्ष के छात्रों द्वारा दिनांक 5 जनवरी 2009 से 13 जनवरी 2009 तक विभिन्न आध्यात्मिक एवं खेल-कूद प्रतियोगितायें सम्पन्न कराई गयी।

जिसमें **वॉइस ऑफ स्मारक प्रतियोगिता (भजन प्रतियोगिता)** में विवेक जैन दलपतपुर व संदीप पाटील ने प्रथम तथा प्रफुल्ल शेडगे ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। प्रतियोगिता की अध्यक्षता श्रीमती प्रमीलाजी कासलीवाल ने की। इस अवसर पर निर्णायक के रूप में श्रीमती अर्चनाजी पाटनी एवं श्रीमान् गौरवजी छाबड़ा मंचासीन थे। प्रतियोगिता का संचालन अंकित जैन लूणदा एवं शशांक जैन सागर ने किया।

'जैन सिद्धान्तों की वर्तमान जीवन में उपयोगिता' विषय पर आयोजित **उपाध्याय वर्ग की वाद-विवाद प्रतियोगिता** में **पक्ष** से सर्वज्ञ भारिल्ल जयपुर ने प्रथम व आशीष जैन टोंक ने द्वितीय तथा **विपक्ष** से कु. प्रतीति पाटील जयपुर ने प्रथम व रजित जैन भिण्ड ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इसकी अध्यक्षता प्रो. नेमीचंदजी ने की। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री, निर्णायक पण्डित मनीषजी खड़ैरी एवं पण्डित मनीषजी खतौली थे। संचालन सुधीर जैन अमरमऊ एवं गजेन्द्र जैन भीण्डर ने किया।

उपाध्याय वर्ग की तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता में कु. प्रतीति पाटील ने प्रथम एवं कु. श्रुति जैन दिल्ली ने द्वितीय स्थानप्राप्त किया। इसकी अध्यक्षता प्रो. प्रकाशचंदजी जैन ने की। निर्णायक पण्डित संजीवजी खड़ैरी एवं मुख्य अतिथि पण्डित प्रवीणकुमारजी शास्त्री थे। प्रतियोगिता का संचालन सोमिल जैन खनियांधाना एवं नीलेश जैन मुहारी ने किया।

श्लोकपाठ प्रतियोगिता में अजय जैन पीसांगन ने प्रथम व सुधीर जैन ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इस प्रसंग पर अध्यक्ष के रूप में प्रो. बीनाजी अग्रवाल तथा निर्णायक व अतिथि के रूप में क्रमश: पण्डित परेशकुमारजी शास्त्री तथा पण्डित संजयजी शास्त्री बड़ामलहरा मंचासीन थे। प्रतियोगिता का संचालन तपिश जैन उदयपुर और भरत कोरी ने किया।

अंत्याक्षरी प्रतियोगिता में सजल जैन सिंगोड़ी व विवेक जैन ने प्रथम तथा आशीष जैन मड़ावरा व विवेक जैन मड़देवरा ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। प्रतियोगिता के निर्णायक पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री एवं पण्डित प्रवीणकुमारजी शास्त्री थे। अंत्याक्षरी का सचांलन संदीप जैन शाहपुरा व संदीप पाटील ने किया।

'कार्य पुरुषार्थ से या नियति से'विषय पर आयोजित **शास्त्री वर्ग** की **वाद-विवाद प्रतियोगिता** में **पक्ष** से सुधीर जैन व अनुराग जैन भगवां ने प्रथम स्थान तथा तपिश जैन ने

द्वितीय स्थान प्राप्त किया। **विपक्ष** से राहुल जैन नौगाँव ने प्रथम व अंकित जैन ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। प्रतियोगिता की अध्यक्षता पण्डित शुद्धात्मप्रकाशजी भारिल्ल जयपुर ने की। मुख्यअतिथि के रूप में पण्डित पीयूषकुमारजी शास्त्री जयपुर तथा निर्णायक के रूप में पण्डित नीतेशकुमारजी शास्त्री मंचासीन थे। संचालन अजय जैन पीसांगन व महेन्द्र मिरकुटे ने किया।

शास्त्री वर्ग की तात्कालिक भाषण प्रतियोगिता में गजेन्द्र जैन भीण्डर ने प्रथम व अजय जैन ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। संचालन अनुराग जैन व संदीप चौगुले ने किया। इसकी अध्यक्षता श्री दिलीपभाई शाह ने की। निर्णायक के रूप में डॉ. दीपकजी वैद्य जयपुर एवं मुख्य अतिथि के रूप में श्री बी. एल. सेठी व पण्डित शांतिकुमारजी पाटील जयपुर विराजमान थे।

अंग्रेजी भाषण प्रतियोगिता में प्रथम स्थान सुधीर जैन व द्वितीय स्थान संयम शेटे कोल्हापुर ने प्राप्त किया। निर्णायक के रूप में श्री आशीषजी, श्री ए. एल. शाह, हुक्मीचंदजी जैन मंचासीन थे। इसकी अध्यक्षता श्री विनोदकुमारजी शर्मा ने की। संचालन दीपक मजलेकर आलते व कु. स्वाति जैन जयपुर ने किया।

काव्य पाठ प्रतियोगिता में दीपेश जैन अमरमऊ ने प्रथम एवं शनि जैन खनियांधाना ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। अध्यक्षता प्रो. सुरेन्द्रजी उपाध्याय ने की। निर्णायक के रूप में श्री कैलाशचंदजी सेठी एवं पण्डित अनिलकुमारजी शास्त्री खनियाधाना मंचासीन थे। संचालन तपिश जैन एवं सुधीर जैन ने किया।

इन प्रतियोगिताओं के अतिरिक्त क्रिकेट, कबड्डी, खो-खो, बॉलीबॉल, बैडमिंटन, कैरम, शतरंज, दौड आदि प्रतियोगिताओं का भी आयोजन विद्यार्थियों के लिए किया गया।

सभी प्रतियोगिताएँ शास्त्री तृतीय वर्ष के संयोजकत्व में सम्पन्न हुई।

सत्साहित्य विक्रय केन्द्र का उद्घाटन

खजुराहो : अपनी प्राचीन कला के लिये प्रसिद्ध ऐतिहासिक क्षेत्र खजुराहो में अनेक देशी-विदेशी पर्यटक व तीर्थयात्री आते हैं, जिन्हें जैनसाहित्य सुलभता के साथ उपलब्ध रहे, इसके लिये, एतदर्थ क्षेत्र पर एक सत्साहित्य विक्रय केन्द्र की स्थापना की गई है।

इस साहित्य केन्द्र पर पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट एवं उसकी सहयोगी संस्थाओं द्वारा प्रकाशित सत्साहित्य भी पर्यटकों व तीर्थयात्रियों के लिये उपलब्ध रहे ह्न इस भावना के साथ अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के तत्त्वावधान में आयोजित बुन्देलखण्ड तीर्थयात्रा के दौरान दिनांक 12 दिसम्बर, 2008 को सायंकाल सभी विद्वानों एवं तीर्थयात्रियों की उपस्थिति में सत्साहित्य विक्रय केन्द्र का उद्घाटन ट्रस्ट के मंत्री पण्डित पूनमचंदजी छाबड़ा इन्दौर एवं संघपति परिवार से श्री कैलाशचंदजी सेठी जयपुर ने किया।

इस विक्रय केन्द्र की स्थापना हेतु क्षेत्र के अध्यक्ष श्री शिखरचंदजी जैन छतरपुर एवं श्री मुकेशजी जैन खजुराहो का सहयोग विशेषरूप से उल्लेखनीय है।

आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

करेली (म. प्र.) : यहाँ श्री सीमंधर जिनालय में अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन करेली द्वारा दिनांक 24 दिसम्बर से 30 दिसम्बर तक आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया। इस अवसर पर प्रतिदिन गुरुदेवश्री के सी.डी. प्रवचन, जिनेन्द्र भक्ति, सामूहिक कक्षायें एवं विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किये गये।

शिविर में प्रतिदिन पण्डित नन्दकिशोरजी मांगुलकर काटोल, पण्डित संदीपजी रावतभाटा एवं पण्डित अनुभवजी मौ द्वारा ली गई कक्षाओं एवं प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ।

शिविर में करेली के अतिरिक्त सिवनी, जबलपुर, बालाघाट, सागर जिलों के लगभग 180 शिविरार्थियों ने धर्मलाभ लिया। शिविर की सफलता से उत्साहित होकर श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन स्वाध्याय मंदिर ट्रस्ट करेली द्वारा प्रतिवर्ष दिसंबर माह में इसीतरह शिविर लगाने की घोषणा की गई।

बाल सी.डी. के छठे पुष्प का विमोचन

आचार्य कुन्दकुन्द सर्वोदय फाउन्डेशन रजि. जबलपुर द्वारा बाल वर्ग को संस्कारित करने के प्रयासों के अन्तर्गत अग्रिम कड़ी के रूप में पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर द्वारा निर्देशित **'तोता तू क्यों रोता'** सी. डी. तैयार हुई है।

इस सी. डी. का विमोचन चैतन्यधाम पंचकल्याणक के अवसर पर श्री अनन्तराय ए. सेठ मुम्बई ने किया। इस सी.डी. में कुल 9 गीत हैं, जिनकी रचना ब्र. सुमतप्रकाशजी खनियांधाना और पण्डित विरागजी शास्त्री जबलपुर ने की है।

श्री देवीलालजी कस्तूरचंदजी जैन के सहयोग से तैयार इस सी.डी. का निर्देशन श्री विराग शास्त्री ने किया है1 सी.डी. प्राप्त करने के इच्छुक 09373294684 पर संपर्क कर सकते हैं।

डॉ. भारिल्ल के आगामी कार्यक्रम

30 जनवरी से 1 फरवरी 2009 तक	मुम्बई	सीमंधर जिनालय मुम्बादेवी का स्वर्ण जयंती समारोह
7 फरवरी से 13 फरवरी 2009 तक	सोनागिरी	पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव
23 फरवरी से 27 फरवरी 2009 तक	सम्मेदशिखरजी	शिलान्यास समारोह
1 मार्च से 3 मार्च 2009 तक	जयपुर	राजस्थान वि. वि. में संगोष्ठी
13 मई से 29 मई 2009 तक	कोलारस	प्रशिक्षण शिविर
1 जून से 22 जुलाई 2009 तक	यूरोप व अमेरिका	धर्म प्रचारार्थ यात्रा
26 जुलाई से 4 अगस्त 2009 तक	जयपुर	आध्यात्मिक शिक्षण शिविर

पाठकों के पत्र

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल कृत प्रवचनसार अनुशीलन को पढ़कर सागर (म. प्र.) से **विनोदजी मोदी** लिखते हैं कि - 'भोगों के इस अविरल प्रवाह में शुद्ध वीतराग शासन की प्रभावना करना पंचमकाल का महान आश्चर्य है।

आपने प्रवचनसार का अनुशीलन करके महानतम कार्य किया है। हम लोगों ने ढाई वर्ष में दो बार प्रवचनसार का स्वाध्याय किया, परन्तु आचार्य कुन्दकुन्द के मर्म को नहीं समझ पाये। आपने अनुशीलन के माध्यम से आचार्य कुन्दकुन्द, आचार्य अमृतचंद्र, आचार्य जयसेन के साथ-साथ अन्य महान आचार्यों, विद्वानों की पद स्थापना करके प्रवचनसार को सरल मौलिक रचना बना दी - यह स्तुत्य कार्य है।

आपने अपने जीवन को जिनालय बनाया, शास्त्र समुद्र मंथन कर शांति सुधा प्रवाहित की जो कि वंदनीय व मनुष्यभव में अनुकरणीय है।

यह पावन धारा अगाधगति से प्रवाहित होती रहे, जिनशासन प्रभावना होती रहे व संसारपीड़ित भव्य आत्मायें परमशांति का वेदन करें - ऐसी मंगल भावना से विनयांजली प्रेषित करता हूँ।'

- विनोद मोदी, दलपतपुर

पुस्तक समीक्षा

ब्र. यशपालजी कृत **'मोक्षमार्ग की पूर्णता'** पुस्तक को पढ़कर उसकी समीक्षारूप में काशी, हिन्दु विश्वविद्यालय वाराणसी से **डॉ. जयंत उपाध्याय** लिखते हैं ह्न

''प्रस्तुत ग्रंथ जैनदर्शन में वर्णित द्रव्य-गुण-पर्याय, कर्म की अवधारणा का स्पष्ट विवेचन तो करता ही है साथ ही इसमें प्रश्नोत्तरी के माध्यम से अन्तर्निहित वैचारिक विवादों का सामंजस्यपूर्ण निराकरण भी किया गया है।

पुस्तक का द्वितीय खण्ड रत्नत्रय को समर्पित है तथा तृतीय खण्ड संग्रहीत खण्ड है, जिसमें सम्यग्दर्शन की विभिन्न परिभाषाओं तथा उनमें अन्तर्संबंधों की चर्चा की गई है। इस परिचर्चा से जहाँ एक ओर जैनधर्म की विशुद्धता का ज्ञान होता है वहीं दूसरी ओर धर्म में उपस्थित विलक्षणता में विश्वधर्म बनने की संभावना की झलक भी दिखती है।

प्रस्तुत पुस्तक जहाँ एक ओर दर्शन की गुह्यता को सरल बनाती है, वहीं दूसरी ओर धर्म की मार्मिक रोचकता को संदेहात्मक नहीं होने देती साथ ही दोनों की तार्किक वैज्ञानिकता को पुष्ट आधार भी प्रदान करती है। पुस्तक पठनीय एवं संग्रहणीय है, जिसमें लेखक का प्रयास सरल से सरलतम व्याख्या की ओर है जिसे मानव मन सहजता से आत्मसात कर जैनधर्म की मार्मिकता का सानिध्य प्राप्त कर लेता है।''

टोडरमल स्नातक परिषद के सदस्यों के पत्र

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय के स्नातक विद्वान **श्री बाँके बिहारी मिश्रा** ने पण्डित टोडरमल स्नातक परिषद के पत्र में श्री टोडरमल स्मारक संस्थान के प्रति अपने जो विचार व्यक्त किये, उन्हें यहाँ प्रकाशित किया जा रहा है -

''किन शब्दों से स्मारक की प्रशंसा करूँ, जिसने मेरी दिशा और दशा दोनों बदल दीं। अब तो संसार का अन्त दिखाई देता है। धर्म क्या है ? आत्मा-परमात्मा क्या है ? - यह बात समझ में आने लगी है।

जयवंत वर्ते स्मारक जो पूज्य गुरुदेव के प्रताप से मेरे लिये खुला है। युग-युग जियें, जयवंत वर्तें छोटे दादा, बड़े दादा जिनसे सरस्वती माँ प्राप्त हुई। पूज्य गुरुदेवश्री, पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, छोटे दादा, बड़े दादा एवं अन्य सभी अध्यापकों का, गुरुओं का मुझ पर महान उपकार एवं एहसान है।

मुझे मेरे किये अपराध समझ में आ गये हैं, ब्रह्मास्त्र मिल चुका है। अब कुम्हार का चाक कितनी देर तक घूमेगा ?

मेरे छोटे भाईयों ! स्मारक की ज्ञान गंगा में नहाओ, निमग्न हो जाओ; जहाँ साक्षात् सरस्वती माँ आत्मा/परमात्मा को लेकर विराजती है। जब तक गगन में चाँद-सूरज रहें, तेरा यश फैलता रहे, तू युगान्तरों में जिये, जयवंत रहे, मेरे हृदय कमल पर विराजे। तेरे यशोगान से मैं अघाता नहीं। जब-जब तेरी याद आती है, तब-तब मेरा हृदय यादों से थकता नहीं।

इस पत्र ने तेरी याद दिलाई है। खुशी से मेरे आँसू झलक आये हैं। मेरे हृदय में तू ही निवास करना। तू जिये, युग-युग जिये, युगान्तरों में जिये, जयवन्त रहे, तुझे किसी की नजर न लगे, तेरी यादों में मैं लिखना बन्द नहीं कर पा रहा हूँ....।''

जिनमंदिर वर्षगांठ महोत्सव सानन्द सम्पन्न

पोन्नूर (तमिलनाडू) : आचार्य कुन्दकुन्द की साधनास्थली पोन्नूर में दिनांक 29 दिसम्बर 08 से 2 जनवरी 09 तक आचार्य कुन्दकुन्द जैन संस्कृति सेन्टर द्वारा निर्मित जिनमंदिरका नवाँ वर्षगांठ महोत्सव मनाया गया।

इस अवसर पर प्रात: जिनेन्द्र पूजन के पश्चात् गुरुदेवश्री के समयसार ग्रंथाधिराज की पाँचवीं-छठवीं गाथा पर हुये सी.डी. प्रवचनों के अतिरिक्त पण्डित हेमंतभाई गाँधी के प्रतिदिन समयसार पर हुये प्रवचनों का लाभ मिला।

दिनांक 1 जनवरी को अनन्तराय ए. सेठ, श्री निमेषभाई शांतिलाल शाह, श्री हितेन भाई सेठ एवं श्री राजेशभाई जवेरी द्वारा ध्वजारोहण किया गया। इस अवसर पर पर्वतराज पर विराजमान भगवान महावीर के पूजन-प्रक्षाल का विशेष लाभ मिला। समस्त कार्यक्रमों में श्री विराग शास्त्री और श्री नीलेशभाई का विशेष सहयोग रहा।

मंगलार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़ में आत्मार्थी छात्रों को आध्यात्मिक एवं लौकिक शिक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से भगवान श्री आदिनाथ विद्यानिकेतन संचालित है।

इस वर्ष विद्यानिकेतन में कक्षा 8 और 9 में प्रवेश दिया जायेगा। अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थी डी.पी.एस. अलीगढ़ में और हिन्दी माध्यम के विद्यार्थी के.एल. जैन इण्टर कॉलेज, सासनी में पढ़ने जाते हैं। प्रवेश के इच्छुक छात्र प्रवेश फार्म मँगाकर तथा भरकर 15 फरवरी 2009 तक निम्न पते पर भेजें -

तीर्थधाम मंगलायतन, अलीगढ़ - आगरा मार्ग, निकट हनुमान चौकी,
सासनी (अलीगढ़)- 204216 (उत्तरप्रदेश)
फोन नं. - 09897069969, 09927013722

शोक समाचार

1. उदयपुर निवासी श्री श्यामजी शाह की धर्मपत्नी श्रीमति विनोदरानीशाह का दिनांक 20 अक्टूबर, 08 को शांत परिणामों से निधन हो गया। आप तत्त्वरुचिवान महिला थीं। आपको तत्त्वचर्चा एवं स्वाध्याय की विशेष लगन थी। विगत कुछ माह से आपको बोन कैंसर था। अन्त समय में आपने बहुत शांत परिणामों सहित देह का त्याग किया।

आपकी स्मृति में वीतराग-विज्ञान व जैनपथप्रदर्शक को 202/- रुपये प्राप्त हुये।

2. फुलेरा निवासी श्री गंभीरमलजी सोनी का 82 वर्ष की अवस्था में शांत परिणामों से देहावसान हो गया है। आपको तत्त्वचर्चा एवं स्वाध्याय की विशेष लगन थी तथा जिनवाणी के अध्ययन-मनन में आप सदैव सक्रिय रहते थे।

आपकी स्मृति में वीतराग-विज्ञान व जैनपथप्रदर्शक को 1100/- रुपये प्राप्त हुये।

3. पीसांगन निवासी श्री रीखबचंदजी पहाड़िया का दिनांक 20 अक्टूबर 2008 को 92 वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आप गहन तत्त्वाभ्यासी व स्वाध्यायप्रेमी थे।

आपकी स्मृति में दिनांक 1 नवम्बर को पण्डित ज्ञानचंदजी विदिशा के सानिध्य में शांति विधान आयोजित किया गया।

इस अवसर पर वीतराग-विज्ञान व जैन पथप्रदर्शक को 2000/- रुपये प्राप्त हुये।

दिवंगत आत्मायें शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हों - ऐसी मंगल भावना है।

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल के व्याख्यान देखिये जी-जागरण पर प्रतिदिन प्रातः 6.40 से 7.00 बजे तक

आगामी कार्यक्रम -

सिद्धक्षेत्र सोनागिर में श्री परमागम श्रावक ट्रस्ट, सोनागिर द्वारा –

श्री 1008 महावीरस्वामी दिगम्बर जिनबिम्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव का भव्य आयोजन

(शनिवार, दिनांक 7 फरवरी से शुक्रवार, दिनांक 13 फरवरी, 2009 तक)

इस मांगलिक महा महोत्सव के कुशल निर्देशक जैनरत्न वाणीभूषण पण्डित ज्ञानचंदजी जैन सोनागिर व प्रतिष्ठाचार्य बाल ब्र. पण्डित जतीशचंदजी शास्त्री दिल्ली रहेंगे।

इस प्रसंग पर वयोवृद्ध विद्वान पण्डित कैलाशचंदजी जैन अलीगढ़, तत्त्ववेत्ता डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल जयपुर, पण्डित रतनचंदजी भारिल्ल जयपुर, तार्किक विद्वान डॉ. उत्तमचंदजी जैन सिवनी व अध्यात्म रसिक पण्डित विमलचंदजी झाँझरी उज्जैन का समागम भी प्राप्त होगा।

इस प्रसंग पर डॉ. हुकमचंद भारिल्ल चेरिटेबल ट्रस्ट, मुम्बई द्वारा डॉ. मुकेश शास्त्री 'तन्मय' का सम्मान किया जायेगा।

आयोजक – श्री परमागम श्रावक ट्रस्ट, आचार्य कुन्दकुन्द नगर, सिद्धक्षेत्र सोनागिर

श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट मुंबई द्वारा –

तीर्थराज श्री सम्मेद शिखरजी में जिनायतन एवं अतिथि भवन का शिलान्यास समारोह एवं बीस तीर्थंकर विधान व सम्मेदशिखर विधान का भव्य आयोजन

(सोमवार, दिनांक 23 फरवरी से शुक्रवार, दिनांक 27 फरवरी, 2009 तक)

इस मांगलिक प्रसंग पर देश-विदेश में ख्यातिप्राप्त डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल जयपुर, डॉ. उत्तमचन्दजी जैन सिवनी, पण्डित ज्ञानचन्दजी जैन विदिशा, पण्डित राजेन्द्रकुमारजी जैन जबलपुर एवं पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री देवलाली आदि विद्वानों के मार्मिक व हृदयग्राही प्रवचनों का लाभ भी प्राप्त होगा।

देवलाली में विशेष शिविर का आयोजन

पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट अत्यंत हर्ष के साथ निवेदन कर रहा है कि देवलाली में दिनांक 14 से 18 मार्च 2009 तक कर्मकांड शिविर का आयोजन किया जा रहा है। इस शिविर की खास विशेषता यह है कि इसमे डॉ. उज्जवला शहा 5 दिन तक प्रतिदिन 6 घंटे एक ही विषय प्रस्तुत करेंगी। सभी साधर्मियों को शिविर का लाभ लेने के लिये हार्दिक आमंत्रण है। आपके आगमन की पूर्व सूचना निम्न पते पर देवें – पूज्य श्री कानजीस्वामी स्मारक ट्रस्ट,

कहान नगर, बेलतगाँव रास्ता, लाम रोड़, देवलाली,

जिला - नासिक (महाराष्ट्र), फोन नं. - 0253-2491044